मार्क्स के आख़िरी दिन

(1881-1883)

बौद्धिक जीवनी

मार्चेलो मुस्तो

अनुवादक

गोपाल प्रधान

मार्क्स के आखिरी दिन (1881-1883):

बौद्धिक जीवनी

मार्चेलो मुस्तो

अनुवादक

गोपाल प्रधान

प्रकाशक: नॉटनल

प्रकाशन: अप्रैल, 2022

© गोपाल प्रधान

विषयसूची

समर्पण

भूमिका 3

पूर्वरंग ‘संघर्ष!’ 7

जीवन का भार और नए शोध 12

अंतर्राष्ट्रीय राजनीति और रूसी विवाद 69

बुज़ुर्ग की मकबूलियत 107

मूर की आखिरी यात्रा 144

पश्चलेख: आखिरी हफ़्ते 174

परिशिष्ट: रोटी और गुलाब 182

जीवनक्रम: 1881-1883 190

भूमिका

पूंजीवाद के जीवन में सबसे हालिया 2008 के संकट के बाद से ही कार्ल मार्क्स के बारे में बातचीत शुरू हो गई है। बर्लिन की दीवार गिरने के बाद मार्क्स की शाश्वत गुमनामी की भविष्यवाणी के विपरीत उनके विचारों का विश्लेषण, विकास और बहस मुबाहिसा फिर से चालू हुआ है। बहुत सारे लोगों ने उस चिंतक के बारे में नए सवाल पूछने शुरू किए हैं जिसे अक्सर गलत ही 'जैसा भी समाजवाद 'के साथ जोड़ा और 1989 के बाद धीरे से परे हटा दिया।

प्रतिष्ठित अखबारों और व्यापक रूप से पढ़ी जाने वाली पत्रिकाओं ने मार्क्स को अत्यंत प्रासंगिक और दूरदर्शी सिद्धांतकार कहा है। लगभग सर्वत्र वे विश्वविद्यालयी पाठ्यक्रम और अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियों में मौजूद हैं। उनके लेखन का पुन:प्रकाशन या नए संस्करण किताबों की दुकानों में फिर से नजर आना शुरू हुए हैं और बीसेक साल की उपेक्षा के बाद उनके लेखन का अध्ययन धीरे धीरे गति पकड़ रहा है। कभी कभी इस अध्ययन के महत्वपूर्ण और नए परिणाम सामने आ रहे हैं। मार्क्स के समूचे लेखन के पुनर्मूल्यांकन की दृष्टि से खास घटना 1998 से मेगा 2 के नाम से मार्क्स और एंगेल्स के समस्त लेखन का ऐतिहासिक-आलोचनात्मक संस्करण का प्रकाशन है। इसके पांच खंड छप चुके हैं और शेष के प्रकाशन की तैयारी चल रही है। इन खंडों में मार्क्स की कुछ किताबों (मसलन जर्मन विचारधारा) का नया रूप है, पूंजी की सारी पांडुलिपियां हैं, उनके जीवन के महत्वपूर्ण दौरों में भेजी गई (और प्राप्त में से चयनित) चिट्ठियां हैं तथा दो सौ नोटबुकें हैं जिनमें उनकी

पढ़ी किताबों के उद्धरण और उनसे उत्पन्न टीपें हैं। नोटबुकें उनके आलोचनात्मक सिद्धांत की कार्यशाला हैं जिनसे उनके चिंतन की जटिल यात्रा और विचारों के विकास के लिए प्रयुक्त स्रोतों का पता चलता है।

इस अमूल्य सामग्री का अधिकतर हिस्सा जर्मन में ही उपलब्ध होने के चलते कुछ ही शोधकर्ताओं तक सीमित है। इससे हमारे सामने मार्क्स की दूसरी ही तस्वीर उभरती है जो लम्बे दिनों से उनके अनगिनत आलोचकों और स्व घोषित समर्थकों द्वारा प्रस्तुत तस्वीर से भिन्न है। मेगा 2 से हासिल नए संदर्भों के आधार पर कहा जा सकता है कि महान राजनीतिक और दार्शनिक चिंतकों में हाल के दिनों में मार्क्स के भाग्य में सबसे अधिक उलट फेर हुए हैं। सोवियत संघ के बिखराव के साथ बदले हुए राजनीतिक परिदृश्य ने मार्क्स को राजव्यवस्था की वकालत से आजादी दे दी है जिसकी जिम्मेदारी उनके माथे पर डाल दी गई थी।

शोध में हुई प्रगति और बदले राजनीतिक हालात को देखकर लगता है कि मार्क्स के चिंतन की व्याख्या के नए उभार की यह परिघटना आगे भी जारी रहेगी। बहुत संभव है कि यह रुचि उनके सैद्धांतिक अनुसंधान के अंतिम दिनों पर ध्यान केंद्रित करे। वर्तमान अध्ययन बौद्धिक जीवनी लिखने की आकांक्षा के साथ शुरू हुआ है इसलिए हो सकता है बाद में मार्क्स के चिंतन की सैद्धांतिक छानबीन के साथ इसकी पूर्णाहुति हो।

मार्क्स के जीवन के आखिरी सालों की पांडुलिपियों से यह मान्यता ध्वस्त हो जाती है कि उनकी बौद्धिक जिज्ञासा बुझ गई थी और उन्होंने काम करना बंद कर दिया था। न

केवल उन्होंने अपनी खोज जारी रखी थी बल्कि उसे नए अनुशासनों में विस्तारित किया था।

1881 और 1882 में मार्क्स ने मानवशास्त्र की हालिया खोजों, प्राक-पूंजीवादी समाजों में सामुदायिक स्वामित्व के रूपों, भूदास प्रथा के खात्मे के बाद रूस में होने वाले बदलावों और आधुनिक राज्य के जन्म के सिलसिले में गहन अध्ययन किया। अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की प्रमुख घटनाओं को भी वे ध्यान से देख रहे थे। इसका सबूत वे पत्र हैं जिनमें उन्होंने आयरलैंड की स्वाधीनता की लड़ाई के लिए अपना समर्थन जाहिर किया और भारत, मिस्र तथा अल्जीरिया में औपनिवेशिक उत्पीड़न का मजबूती से विरोध किया। उन्हें यूरोप केंद्रित, आर्थिक निर्धारणवादी या केवल वर्ग संघर्ष से ग्रस्त कहना मुश्किल है।

पूंजीवादी व्यवस्था की अपनी लगातार जारी आलोचना के लिए मार्क्स नए राजनीतिक संघर्षों, नए विषयों और नए भौगोलिक क्षेत्रों का अध्ययन बुनियादी समझते थे। इसके चलते वे विभिन्न देशों की विशेषताओं को देख सके और समाजवाद का जो स्वरूप पहले उन्होंने सोचा था उससे भिन्न स्वरूप की संभावनाओं पर विचार कर सके।

आखिरी बात कि अंतिम दिनों में मार्क्स बेहद प्यारे इंसान हो गए थे। जीवन में आई अपनी कमजोरी पर परदा नहीं डाला फिर भी संघर्ष करते रहे। संदेह से पीछा नहीं छुड़ाया बल्कि उसका खुलकर सामना किया। आत्म निश्चिति में शरण लेने या प्रथम 'मार्क्सवादियों' की अनर्गल प्रशंसा में सुख पाने की जगह शोध का काम जारी रखा। इन दिनों के मार्क्स की तस्वीर विरल ढंग से विध्वंसक मूलगामी की बनती है जो बीसवीं सदी

की उस पत्थर जड़ी तस्वीर से पूरी तरह भिन्न है जिसमें वे जड़ निश्चय के साथ भविष्य की ओर संकेत करते हैं। असल में वे शोधकर्ताओं और राजनीतिक कार्यकर्ताओं की नई पीढ़ी का उसी संघर्ष की पताका उठाकर आगे ले जाने का आवाहन करते हैं जिसके लिए उनके पहले और बाद के बहुतेरे लोगों ने समूचा जीवन होम कर दिया।

1

पूर्वरंग 'संघर्ष!'

अगस्त 1880 में जान स्विंटन (1829-1901) जो मशहूर अमेरिकी प्रगतिशील पत्रकार थे यूरोप घूमने आए। वहां वे इंग्लैंड के धुर दक्षिणपूर्वी छोर से कुछ किलोमीटर दूर स्थित छोटे से खाड़ी नगर केन्ट के पास राम्सगेट गए। यह यात्रा उन्होंने तत्कालीन अमेरिका में सबसे व्यापक पाठक समुदाय वाली खुद द्वारा संपादित पत्रिका सन के लिए एक साक्षात्कार हेतु की थी। जिनसे साक्षात्कार लेना था वे अंतर्राष्ट्रीय मजदूर आंदोलन के एक प्रमुख प्रतिनिधि बन चुके कार्ल मार्क्स थे।

जन्म से जर्मनी के नागरिक मार्क्स फ़्रांसिसी, बेल्जियाई और प्रशियाई सरकारों द्वारा 1848-49 में अपने देशों में उभरे क्रांतिकारी आंदोलनों का दमन करने के क्रम में बहिष्कृत होने के बाद राष्ट्रविहीन हो चुके थे। 1874 में जब उन्होंने ब्रिटेन की नागरिकता के लिए आवेदन किया तो उनकी अर्जी खारिज कर दी गई क्योंकि स्काटलैंड यार्ड की एक रिपोर्ट में उन्हें ऐसा 'बदनाम जर्मन आंदोलनकारी और कम्यूनिस्ट सिद्धांतों का वकील' बताया गया था जो 'अपने राजा और देश के प्रति निष्ठावान नहीं' रहा था।

दस साल से अधिक समय तक मार्क्स न्यू यार्क ट्रिब्यून के संवाददाता रहे; 1867 में 'पूंजी' नामक ग्रंथ में पूंजीवादी उत्पादन पद्धति की आलोचना प्रकाशित की थी और 1864 के बाद आठ सालों तक इंटरनेशनल नामक मजदूर संगठन के नेता रहे थे। 1871 में उनका नाम यूरोप के तमाम अखबारों में छपा था जब 'फ़्रांस में गृहयुद्ध' में पेरिस कम्यून